8

बौद्ध दर्शन

प्रस्तावना

छः नास्तिक दर्शनों में बौद्ध दर्शन अन्यतम है। बौद्ध दर्शन का भारतीय दर्शन जगत् में अतीव माहात्म्य है। आधुनिक काल में भी बौद्ध दर्शन का प्रभाव सर्वत्र दिखता है। यद्यपि नास्तिक हैं तथपि भगवान बुद्ध द्वारा सनातन धर्म का प्रचार किया गया। बौद्ध धर्म का आरम्भ कैसे हुआ, इसका ज्ञान होता है। और भी यहाँ बौद्ध धर्म के प्रमा और प्रमाण की भी आलोचना की गई है। विषय की सरल भाषा द्वारा आलोचना की जा रही है।

उद्देश्य-

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे:

- बौद्ध दर्शन का उद्भव जान पाने में;
- त्रिपिटक को जान पाने में;
- भगवान् बुद्ध के जीवन को जान पाने में;
- बौद्धधर्म के प्रमाण को जान पाने में;
- बौद्धधर्म के प्रमेय को जान पाने में;
- बौद्ध दर्शन के मोक्ष और मोक्ष-साधन को जान पाने में;
- बौद्ध दर्शन के पदार्थों को जान पाने में;

टिप्पणी

8.1 भूमिका

सम्पूर्ण भूमण्डल में प्रसिद्ध महात्मा बुद्ध का महत्व अतिप्रसिद्ध है। इस महामानव महापुरूष ने अहिंसा का उपदेश दिया। इसी महापुरूष ने लोगों के दु:ख निवारण के लिए अपना राज्य त्याग दिया।

यह महापुरूष शाक्य वंशीय कपिलवस्तु नरेश शुद्धोदन के सुपुत्र थे। इनका प्रथम नाम सिद्धार्थ था। बाल्यकाल से ही सिद्धार्थ का चित्त विषयों में रत नहीं था। पुत्र की इस प्रकार की विरक्ति को देखकर पिता ने उसके लिए सम्पूर्ण सुख-साधन का समायोजन किया। उसके बाद भी सिद्धार्थ का चित्त उनमें आसक्त नहीं हुआ। अब किसी घायल, किसी वृद्ध, उसके पश्चात् मूक तथा संन्यासी को देखकर उसके हृदय में महान वैराग्य उत्पन्न हुआ। अत: मानवों के दु:खनिवृत्ति के लिए राजकुमार सिद्धार्थ ने रात्रि में प्रिय पत्नी और नवजात पुत्र को छोड़कर घर से संन्यास ले लिया।

वहाँ से उन्होंने प्रथम पाँच ब्राह्मणों के साथ तप किया, किन्तु उसके द्वारा उनके मन में पूर्ण सन्तोष नहीं हुआ। अनन्तर उन्हें महान श्रम, सतत् अभ्यास और तपस्या द्वारा एक दिन बोध प्राप्त हुआ। वहाँ से वह बुद्ध के रूप में प्रसिद्ध हुए। उन्होंने लोगों को उपदेश दिया, ''यह संसार दु:खमय है, दु:ख का मूल कामना है, कामना का उन्मूलन साध्य है एवं दु:ख-निवृत्ति सम्भव है। महात्मा बुद्ध ने इन चार आर्यसत्यों का प्रचार किया। उन्होंने लोगों के दु:ख निवारण और उनके कल्याण के लिए उपदेश दिया। ये उनके प्रमुख उपदेश हैं- मन, वचन, कर्म से अहिंसा का पालन करिए, सदा सत्य बोलना चाहिए, किसी की भी कोई भी वस्तु कभी भी नहीं चुरानी चाहिए, सभी को समान दृष्टि से देखना चाहिए, सत्कर्म करना चाहिए। सभी पर दया का आचरण करना चाहिए, शरणागतों की रक्षा करनी चाहिए, अधिक संग्रह नहीं करना चाहिए और ब्रह्मचर्य-पालन करना चाहिए।

इनके पालन से ही सुख और शान्ति हो सकती है। महात्मा बुद्ध के विचारों और उपदेशों का प्रचार न केवल भारत में अपितु, चीन, जापान, श्रीलंका आदि देशों में भी लोकप्रिय हुआ।

इस दर्शन के आदि प्रवर्तक गौतम बुद्ध हैं। शुद्धोदन और माया देवी के पुत्र, गौतम गोत्र में उत्पन्न क्षत्रिय सिद्धार्थ ही बाद में ज्ञान के उदय के कारण बुद्ध नाम से प्रसिद्ध हुआ। बौद्ध दर्शन का परम सिद्धान्त है- 'दु:ख का मूल आशा है। बौद्धों का सम्प्रदाय माध्यमिक-योगाचार-सौत्रान्तिक-वैभाषिक के भेद से चार भागों में विभाजित है।

प्रपञ्च को अधिकृत करके उनकी दृष्टि इस प्रकार है-

मुख्यो माध्यमिको विवर्तमखिलं शून्यस्य मेने जगत्
योगाचारमते तु सन्ति मतयस्तासां विवर्तोऽखिल:।
अर्थोऽसति क्षणिकस्त्वसावनुमितो बुद्धेति सौत्रान्तिक:
प्रत्यक्षं क्षणभङ्गुरं च सकलं वैभाषिको भाषते॥

बौद्ध दर्शन का प्रचार और प्रसार पालि भाषा में हुआ। संस्कृत में अवगणना ही बुद्धमत के नाश के कारणों में अन्यतम है, ऐसा विवेकानन्द ने कहा है, यह यहाँ स्मर्तव्य है। प्रत्यक्ष और अनुमान, दो प्रमाण बौद्ध स्वीकार करते हैं। बौद्ध दर्शन ऐतिहासिक कालक्रम से जैन दर्शन के परवर्ती है। इसका यह कारण कहा जा सकता है कि महावीर के पर्यन्त जैन तीर्थंकरों और अन्य दार्शनिकों के साहित्य में कहीं भी बौद्ध दर्शन का उल्लेख नहीं है, किन्तु महावीर के सिद्धान्त बौद्ध निकायों में उपलब्ध हैं। इस प्रकार सिद्ध होता है कि बौद्ध धर्म जैन धर्म की अपेक्षा से परवर्ती है। यह ऐतिहासिक सत्य है। बौद्ध दर्शन के प्रवर्तक भगवान बुद्ध थे। यह भी ऐतिहासिक घटना है। बुद्ध का पूर्व नाम सिद्धार्थ था। इनका जन्म 226 ई.पू. में हुआ। इनके पिता शाक्य वंशीय राजा शुद्धोदन थे। इनकी माता मायादेवी इनके जन्म के एक सप्ताह के अनन्तर ही दिवंगत हो गई। इनके जन्म के समय में कपिलवस्तु के राज ज्योतिष द्वारा भविष्यवाणी की गई, जिस कुलीन का महल से निष्क्रमण होगा, और यह धर्म प्रवर्तक होंगे। उसके अनुसार ही सिद्धार्थ ने इक्कीस वर्ष में अपने पत्नी-पुत्र को त्याग कर सांसारिक दु:खों के आत्यन्तिक नाश के लिए उपाय के अन्वेषण के प्रयोजन से राजभवन को भी त्याग दिया। उन्होंने चिरशान्ति की प्राप्ति तथा ज्ञानार्जन के लिए गहन वन में प्रवेश किया।

ज्ञानान्वेषण के प्रयत्न में सर्वप्रथम उस सांख्यतत्ववेत्ता ने अराडकल के शिष्यत्व में सत्य का अनुसंधान किया। किन्तु असन्तुष्ट होने पर विविध स्थानों पर ज्ञानोपदेशों के श्रवण के पश्चात् उरू वेला में कठोर तप करके चार आर्यसत्य का ज्ञान प्राप्त किया। उसके कारक उनके सम्पूर्ण कल्मष नष्ट हो गए और बुद्धत्व की प्राप्ति हुई। तत्पश्चात् सर्वप्रथम उन्होंने सारनाथ में कौण्डिन्य आदि पाँच शिष्यों को उपदेश देने के लिए धर्मचक्र को प्रवर्तित किया। जनकल्याण के लिए उनकी उपदेशों की भाषा मागधी थी। धर्मोपदेश करके उनका अस्सी (80) वर्षीय दीर्घ जीवन वैशाख मास पूर्णिमा का पर्याप्त महत्व स्वीकार किया जाता है। क्योंकि यह तिथि बुद्ध की जन्म-निर्वाण की तिथि है।

भारतीय धर्मगुरू भगवान् बुद्ध ज्ञानियों में श्रेष्ठ हैं ऐसा विख्यात है। गौतमी द्वारा पोषित, ऐसा वह गौतमबुद्ध है। कौशल गणराज्य के राजा शाक्य वंशीय शुद्धशील शुद्धोदन तथा उनकी पत्नी पतिव्रता माया देवी का पुत्र सिद्धार्थ था। इस प्रकार वैराग्य का अवलम्बन करके गौतम बुद्ध हुए।

सिद्धार्थ महान सम्राट अथवा परिव्राजक होंगे, ऐसी देववाणी थी। पिता के अतिप्रयत्न का भी अतिक्रमण करके दैव से प्रभावित सिद्धार्थ रोगी, वृद्ध, मृत पुरूष तथा स्थित प्रज्ञ मुनि को देखकर वैराग्यपूर्वक वन को गया। वहाँ बोधिवृक्ष की छाया में तप करके गौतम बुद्ध हुआ। और उसके कारण वह नश्वर तत्कालीन मात्र साम्राज्य को त्याग का आर्तजनों के हृदय-सिंहासन पर शाश्वत स्थान प्राप्त करके अब भी विराजमान हैं।

इस देश में गौतम बुद्ध के काल में धर्म के स्थान पर सर्वत्र अधर्म का ही प्रचार प्रसार था यज्ञ-याग आदि में पशुबलि नरबलि इत्यादि हिंसाक्रम प्रचलित थे। गौतम बुद्ध ने 'अहिंसा परमो धर्म:' इस सनातन तत्व को पुन: स्थापित किया। गौतम बुद्ध का मार्ग

बौद्धधर्म, इस क्रम से प्रसिद्ध है। सम्राट अशोक जैसे अगणित चक्रवर्ती ने बौद्ध धर्म का अनुयायी होकर विदेशों में भी इसका प्रचार किया। चीन-जापान आदि देशों में आज भी बौद्धधर्मी बहुत हैं।

8.2 सम्प्रदाय परिचय

भगवान् बुद्ध द्वारा बौद्ध दर्शन प्रवर्तित है। भारतीय शास्त्रों के आधार पर बौद्ध दर्शन का प्रभाव विशेष रूप से दिखता है। बौद्ध मूलग्रन्थ भारत में प्रायः लुप्त हैं। विदेशीय पण्डितों के संशोधन के फल स्वरूप कुछ ग्रन्थ दिखते हैं। भगवान् बुद्ध के अनन्तर बौद्धों की बहुत सी शाखाएँ उत्पन्न हुई। और वे चार प्रधान रूप से हैं- वैभाषिक, सौत्रान्तिक, योगाचार और माध्यमिक। वैभाषिकों का हीनयान सम्प्रदाय है। अन्य तीनों का महायान सम्प्रदाय है। बौद्धों का 'शून्यवाद' प्रसिद्ध है। 'यत्र किमपि नास्ति तत्' इसमें शून्यपद का अर्थ नहीं है। बौद्ध दर्शन में शून्यपद का दार्शनिक महान् अर्थ है। बौद्धमत के बहुत से धार्मिक अंश त्रिपटक में निरूपित हैं।

8.2.1 योगाचार मत-

योगाचार का सिद्धान्त विज्ञानवाद है। विज्ञानवाद की विचारधारा के अनुसार बाह्य सत्ता का अस्तित्व स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि बाह्य जगत् प्रयोजन काल में मन में बनने वाले प्रतिबिम्ब के आधार द्वारा ही वह जाना जाता है। इसमें प्रतीति का आधार ज्ञान है, अतएव ज्ञान अथवा विज्ञान ही सत्य तत्व है। चित्त, मन आदि विज्ञान की ही संज्ञाएँ हैं। विज्ञान की चेतन क्रिया के सम्बन्ध वश चित्त कहलाता है, मन क्रिया सम्बन्ध वश ही मन कहा जाता है। विषय ग्रहण के साधन रूप में ही विज्ञान सिद्ध है।

8.2.2 माध्यमिक मत

माध्यमिकों का सिद्धान्त शून्यवाद है। शून्यवाद के मत के अनुसार बाह्य पदार्थ भी सत्य नहीं है, आन्तरिक पदार्थ भी सत्य नहीं है, विज्ञान भी सत्य नहीं है। शून्य ही सत्य होता है। अब शून्य क्या है, यह विचार करते है। शून्य किसका अभाव है। यहाँ माध्यमिकों का मत है कि शून्य न तो भावरूप है, न अभाव रूप। यह तो अनिवर्चनीय है। सभी के द्वारा भिन्न रूप में ही इसकी शून्य संज्ञा है। यहाँ वेदान्तियों द्वारा ब्रह्म का स्वरूप अनिर्वचनीय स्वीकार किया जाता है।

यही बौद्ध दर्शन का अन्तिम सत्य है। वैसे ही सर्वप्रथम वैभाषिक सम्प्रदाय द्वारा बाह्यार्थ की प्रत्यक्ष सत्ता स्वीकृत है। उसके बाद सौत्रान्तिक द्वारा बाह्यार्थ अनुमेयवाद का सिद्धान्त प्रतिपादित है। तदन्तर योगाचार के द्वारा विज्ञान मात्र की सत्ता स्वीकृत है। अन्त में माध्यमिक द्वार शून्य ही परमतत्व ही संसाधित है। इन सम्प्रदायों में वैभाषिक हीनयान को स्वीकार करता है और अवशिष्ट तीन सम्प्रदाय महायान को स्वीकार करते हैं।

टिप्पणी

8.2.3 वैभाषिक मत

वैभाषिक मतानुसार इन्द्रिय ज्ञान इस बाह्य जगत् का मिथ्यात्व नहीं हो सकता। आन्तरिक तत्व के मन की भी स्वतन्त्र सत्ता है। बाह्य पदार्थों के ज्ञान के लिए इन्द्रियों के आन्तरिक तत्व से सहयोग की आवश्यकता नहीं है। आन्तर तत्व भी बाह्य पदार्थ के निरपेक्ष ज्ञान के प्रति कारणभूत होते हैं। इस प्रकार दोनों पदार्थों की सत्ता सिद्ध होती है।

8.2.4 सौत्रान्तिक मत

सौत्रान्तिक के मत में बाह्यर्थानुमेयवाद स्वीकार किया जाता है। इसके अनुसार बाह्यार्थ पदार्थ इन्द्रिय-ज्ञान गम्य नहीं होते हैं। क्योंकि पदार्थ क्षणिक हैं, परिणामस्वरूप इन्द्रियार्थ सन्निकर्षकाल में और ज्ञानानुभवकाल में पदार्थ परिवर्तित ही उत्पन्न होते हैं। अत एव उस क्षण में पदार्थान्तर ही अभिमुख होता है। एवम् बाह्य पदार्थों की सत्ता प्रत्यक्ष गम्य नहीं है, अनुमान द्वारा ही वह ज्ञात होता है। यह सिद्धान्त ही बाह्यार्थानुमेयवाद होता है।

पाठगत प्रश्न 8.1

1. बौद्ध धर्म के प्रतिष्ठाता कौन हैं?
2. बौद्ध दर्शन नास्तिक है अथवा आस्तिक?
3. गौतम बुद्ध के माता-पिता कौन थे?
4. गौतम बुद्ध का जन्म स्थान कहाँ था?
5. बौद्ध दर्शन में कितने सम्प्रदाय हैं?
6. शून्यवादियों के मत में शून्य का स्वरूप क्या है?
7. किनके मत में बाह्य पदार्थ सत् हैं?
8. किनके मत में बाह्य पदार्थ असत् हैं?
9. किनके मत में बाह्य पदार्थ अनुमेय है?
10. बुद्ध का जन्म कब हुआ?

8.3 अष्टाङ्गिक मार्ग

बुद्ध प्रतिपादित इस मध्य मार्ग के आठ अंग एवं प्रकारण हैं- सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति, और सम्यक् समाधि। इस अष्टाङ्गिक मार्ग के सम्यक् पालन द्वारा निर्वाण प्राप्त

टिप्पणी

होता है, इस प्रकार की बौद्धों की मान्यता है। इस प्रकार से भगवान् बुद्ध ने अविद्या का मूल कारण मानकर ज्ञान द्वारा उसके परिमार्जन का महत्व प्रतिपादित किया। शुद्ध ज्ञान शुद्ध मनोवृत्ति के बिना प्राप्त नहीं होता है। शरीर शुद्धि के लिए भगवान बुद्ध द्वारा शील-समाधि-प्रज्ञा आदि का महत्व प्रतिपादित किया गया। शील के अन्तर्गत अहिंसा-सत्य-अस्तेय-ब्रह्मचर्य-अपरिग्रह का समावेश होता है। यहाँ नैतिक सुख-साधनों का परित्याग गृहीत है। समाधि द्वितीय साधन है। समाधि से पूर्व जन्म-स्मृति-उत्पत्ति-विनाश आदि का ज्ञान बाधक नियम का बोध अपेक्षित है। प्रज्ञा तृतीय साधन को कहते हैं। प्रज्ञा भी तीन प्रकार से प्रतिपादित है- श्रुतमयी प्रज्ञा, चिन्तामयी प्रज्ञा और भावनामयी प्रज्ञा।

8.4 बौद्ध दर्शन के मत में मोक्ष का स्वरूप

मोक्ष शब्द 'मोक्ष्' मोचने इस धातु से व्युत्पन्न है। यथा स्वर्ग नामक 'दिव्यसुखोपभोगसाधनों द्वारा युक्त स्थान हैं जहाँ पुण्यवादी लोग मृत्यु के अनन्तर जाते हैं, ऐसा सभी का विश्वास है। तथा मोक्ष नामक कोई स्थान विशेष नहीं है। उसमें कहा गया है-

''मोक्षस्य न हि वासोऽस्ति न ग्रामान्तरमेव वा।
अज्ञानतिमिरग्रन्थिनाशो मोक्ष इति स्मृतः॥

वस्तुतः जीव परमात्मा का ही अंश है। पर अज्ञानता के कारण वह उस तथ्य को नहीं जानता है। जब अज्ञान नष्ट होता है तब साक्षात्कार के द्वारा वह परमात्मा के साथ तादात्म्य का अनुभव करता है। एवं अज्ञान से मुक्ति ही मोक्ष है। मृत्यु के अनन्तर स्वकर्म के अनुसार पुनः नूतन जन्म ग्रहण करता है। एवम् उस भ्रमित की जब वासना नष्ट होती है, तब अकस्मात् जन्म-मरण के चक्र से वह मुक्ति को प्राप्त करता है। वह ही मोक्ष है। अन्य में पुनः छः शत्रुओं के प्रभाव से मुक्ति का नाम मोक्ष है, ऐसा मानते हैं। मनुष्य मात्र सुख संपादन तथा दुःख निवारण के लिए प्रयत्न करता है। उसमें क्या करना चाहिए, क्या नहीं करना चाहिए, इस विषय में धर्म द्वारा किया गया मार्गदर्शन वह सम्यक् रूप से जानता है। दुर्योधन की 'जानामि धर्म न च में प्रवृत्ति जानाम्यधर्म न च मे निवृत्तिः' उक्ति प्रसिद्ध है ही उसके अनुसार विकारों से अभिभूत मानव धर्माचरण में स्वभावतः ही प्रवृत्त नहीं होता है। यथा नीचे गमन करने का स्वभाव जलप्रवाह का है वैसे ही प्रवाह पतित के समान स्वभाव मनुष्य का प्रतीत होता है। धर्माचरण प्रवाह के विरूद्ध जाना है। अधोगमन विनाश के लिए सम्पादित है। किन्तु प्रवाह के विलोम में तैरने के लिए शरीर-सामर्थ्य, मनोनिग्रह, आत्मविश्वास इत्यादि गुण आवश्यक होते हैं। अतः यदि स्वकल्याण को साधने के लिए धर्म के आचरण की कामना करता है तो विकारों के ऊपर विजय का सम्पादन आवश्यक है। हमारे ऋषि-मुनियों द्वारा सूक्ष्म दृष्टि से मानव प्रवृत्ति के प्रमुख रूप से छः विकार निर्धारित है। और उन्हें रिपु (शत्रु) संज्ञा प्रदान

टिप्पणी

की गई है। काम-क्रोध-लोभ-मोह-मद-मत्सर, ये छः शत्रु सुने गए हैं। प्रत्येक व्यक्ति के अन्तःकरण में ये विकार निभृत रूप में रहते हैं। मन की दुर्बल अवस्था में वे ऊपर आ जाते हैं। तप, पूत, योगी भी इस विषय में अपवाद नहीं हैं। विश्वामित्र-मेनका का आख्यान तो सभी में सुपरिचित ही है। 'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः' इस वचन के अनुसार मन ही सभी आपत्तियों के मूल में रहता है। अतः मनोनिग्रह अथवा इन्द्रियजय बार-बार शास्त्रकारों द्वारा उपदिष्ट है। शीतोष्ण-सुख-दुःख-जय-पराजय-मान-अपमान आदि द्वन्द्वीतत्व ही इन्द्रियजय का निदर्शन है।

एवम् इन्द्रियों के निग्रह, संयमय द्वारा, विकारों के षड् रिपुओं के ऊपर विजय और इनके प्रभाव से मुक्ति ही मोक्ष है। यदि विकारों का प्रभाव नहीं होगा तो ही उसकी प्रज्ञा स्थिर होती है। इस प्रकार विकार रहित मनुष्य अनुपम, सुख और अद्वितीय आनन्द अनुभव करता है। वह आत्मस्वरूप का साक्षात्कार करता है। परमात्मा के अंशत्व का प्रत्यक्ष करता है। वह ही जीवनमुक्त है। यही मनु जन्म की कृतार्थता है।

8.5 बौद्ध धर्म की आचार मीमांसा

सांसारिक दुःखों से मुक्ति के लिए भगवान बुद्ध के द्वारा जटिल दार्शनिकता की अनपेक्षा करके सरलता से आचार पद्धति प्रतिपादित है। बुद्ध ने गहन आध्यात्मिकता के प्रश्न नहीं दिए। अतः श्रावस्ती विहार के अवसर पर मालुंम्यपुत्त द्वारा आध्यात्म विषय में बुद्ध को पूछा गया। तब बुद्ध ने आचार मार्ग का ही उपदेश दिया। बुद्ध मत के द्वारा आर्य चतुष्टय इस प्रकार से निर्दिष्ट है- (दुःख (दुःख समुदय (दुःख निरोध (और दुःख निरोध गामी उपाय। अर्थात् संसार दुःखमय है, दुःखों का निदान भी होता है, दुःखों से मुक्ति भी प्राप्त कर सकते हैं, मुक्ति मार्ग भी निर्धारित है। केवल आर्यजन ही इनको प्राप्त कर सकते हैं, अनार्य तो जब तक जीते हैं, दुःखों में ही जीते हैं। बुद्ध के मतानुसार आर्य-सत्य के मार्ग के द्वादश (12) कारण हैं- (जरा-मरण, (जाति (भव, (उपादान (तृष्ण (वेदना (स्पर्श (षडायतन (नामरूप (विनय (संस्कार (और अविद्या। इनमें प्रत्येक पूर्ववर्ती परवर्ती के प्रति कारण है।

उदाहरणार्थ जरा-मरण का कारण जाति है, जाति का कारण भव है, भव का कारण उपादान है। इन द्वादश कारणों को आश्रित करके कार्यकारण भाव का जो सिद्धान्त प्रतिपादित है, वह बौद्ध मत में प्रतीत्य समुत्पाद कहलाता है। प्रतीत्य समुत्पाद का तात्पर्यार्थ होता है। किसी वस्तु की प्राप्ति से अन्य वस्तु की उत्पत्ति होती है। एवम् यह वस्तुतः सापेक्ष कारणातावाद है, यह भी कहा जा सकता है। प्रयीत्य समुत्पाद ही बौद्ध प्रतिपादित कारणवाद है। यही मानव की उत्पत्ति के सन्दर्भ में शृंखला बद्धता का निर्देश करता है। मानव-उत्पत्ति की शृंखला में बारह अंग और तीन काण्ड थे। प्रथम काण्ड में अतीत जन्म से सम्बद्ध निदान है, फलतः अविद्या जन्य संस्कार उत्पन्न होते हैं। द्वितीय काण्ड में वर्तमान जीवन से सम्बन्धित निदान है जिसके अन्तर्गत विज्ञान से भव पर्यन्त आठ कारण उत्पन्न होते

हैं। तृतीय काण्ड में भविष्य से सम्बद्ध निदान होता है। वहाँ जाति जरा-मरण दो कारण गृहीत होते हैं।

तृतीय आर्य-सत्य दु:ख-निरोधात्मक है। उसका तात्पर्य है कि कार्य कारण पर आश्रित रहता है तथा कारण यदि ध्वंस हो तब कार्य भी स्वत: ध्वस्त होगा। एवम् मूल कारण रूप अविद्या को विद्या से उन्मूलित करे तब उससे उत्पन्न कोई भी कार्य नहीं हो सकता है। चतुर्थ आर्य-सत्य निर्वाण है। इसकी प्राप्ति के लिए बुद्ध द्वारा मध्यम मार्ग का उपदेश दिया गया। अर्थात् निर्वाण प्राप्ति के लिए कठोर व्रत, उपासना आदि की आवश्यकता अपेक्षित नहीं होती है, और न ही सर्वथा श्रम रहित आचरण प्रशस्थ (प्रशंसनीय) है। दोनों के बीच में क्या अपेक्षणीय है, इस पर विचार करके भगवान बुद्ध द्वारा जो मार्ग प्रतिष्ठापित है वह ही मध्यम मार्ग है। इस मध्यम मार्ग के आठ अंग हैं, अतएव अष्टाङ्गिक मार्ग कहे जाते हैं।

8.6 बौद्ध चिन्तन के दार्शनिक आधार

बौद्ध दर्शन का जो चिन्तन सर्वस्व है, उसका आधार आध्यात्मवाद नहीं है। बौद्ध चिन्तन तो संघातवाद सत्तावाद का ही विस्तार है। आत्मचिन्तन दु:ख-निवृत्ति का मुख्य साधन है, तथापि बुद्ध द्वारा आत्मा के अस्तित्व को ही निराकृत किया गया। उनके मत के अनुसार आत्मा केवल मनोवृत्तियों की पुञ्जमात्र है। क्योंकि मानव प्रवृत्तियों के अतिरिक्त उस आत्म तत्व का कोई भी अस्तित्व नहीं है। वह आत्म तत्व तो रूप-वेदना-संज्ञा-संस्कार-विज्ञान आदि पञ्चस्कन्धों का समुच्चय है। रूप भौतिक पदार्थ है। किसी भी वस्तु का साक्षात्कार संज्ञा होता है। उस संज्ञा के द्वारा उत्पन्न सुख-दु:ख अथवा उदासीनता का भाव वेदना कहलाता है। भूतकालिक अनुभव से उत्पन्न, स्मृति के कारणभूत मानसिक प्रवृत्तियों का स्वभाव संस्कार है। यही चैतन्य विज्ञान नाम से जान जाता है। आत्मा का स्वरूप स्पष्ट करने के लिए नागसेन मिलिन्द से रथ के प्रत्येक अवयव के सम्बन्ध में प्रश्न करते हैं। और मिलिन्द प्रत्येक प्रश्न का नकारात्मक उत्तर देते हैं। वस्तुत: स्वतन्त्र रूप से अश्व रथ नहीं हैं, और न ही वल्गारथ हैं, यह काठ की गाड़ी भी रथ नहीं है। इस प्रकार की स्थिति मे रथ के प्रत्येक अवयव रथ हैं, ऐसा स्वीकार करते हैं। वैसे ही स्वतन्त्र रूप में काई भी आत्मा नहीं है। अपितु व्यवहार में दृश्यमान भौतिक और मानसिक व्यापारों का समूह ही आत्मा कहलाते हैं।

8.6.1 सन्तान वाद

बौद्ध दर्शन के अनुसार जीव और जगत् दोनों ही अनित्य है। यह स्कन्ध पञ्चक स्थिर नहीं है। क्षण-क्षण में यह परिवर्तित होता है। जैसे- दीप की ज्वाला सतत् एक ही दिखती है, किन्तु वह प्रतिक्षण परिवर्तित होती रहती है। तभी यह अनुभव नहीं होता है कि तेल-वर्तित के संयोग से दृश्यमान दीपशिखा प्रतिक्षण नूतन है तथा तेल और

टिप्पणी

वर्तिक का अंश जलकर उसमें ही प्रविष्ट होता है। एवम् प्रकाश शिखा के रूप में पूर्वत: विद्यमान ज्वाला ही नष्ट होती है। बौद्ध दर्शन में मुख्यत: परिणाम का सिद्धान्त अभिमत है। अत: जगत् के सत्यत्व को अस्वीकृत करके उसकी परिणामात्मकता को स्वीकार किया गया है। परिणाम ही सत्य है किन्तु इस परिणाम के मूल में कोई भी अन्य सत्य तत्व नहीं है। बुद्ध के वैचारिक सूक्ष्मता की यह द्वितीय कल्पना है।

8.7 बौद्ध दर्शन का धार्मिक विकास

बौद्धधर्म में महायान सम्प्रदाय ने थेरवाद को स्वीकार किया, अतएव उसकी अपर संज्ञा हीनयान भी है। बौद्ध धर्म के विविध यानों के बोध विषय में अर्थात् जीवन मुक्ति के निरूपण के विषय में एकरूपता नहीं है। इन तीन यानों की तीन जीवनमुक्तियाँ हैं - श्रावकबोधि, प्रत्येकबुद्धबोधि, और सम्यक् सम्बोधि। इन सभी की साधना पद्धति भिन्न है। बौद्ध दर्शन का विकास बौद्ध धर्म के साथ नहीं हुआ। जब बौद्ध धर्म का प्रचण्ड प्रचार हुआ तब बौद्ध दर्शन के सिद्धान्त अस्तप्राय थे। किन्तु जब भी बौद्ध विद्वानों का बुद्ध-उपदेशों के गाम्भीर्य में प्रवेश हुआ, तभी बौद्ध धर्म स्वत: ही शिथिल हो गया।

8.7.1 शून्यवाद में सत्य की समीक्षा-

शून्यवादी बौद्धों के मत के अनुसार सत्य दो प्रकार का है -व्यवहारिक और पारमार्थिक। लोक व्यवहार में प्रचलित सत्य व्यावहारिक रूप में स्वीकार किया जाता है। इसका अपर नाम सांवृतिक भी है। पारमार्थिक सत्य तो अनुपपन्न, अनिरूद्ध, अनुच्छेद्य और अशाश्वत है। पारमार्थिक सत्य बुद्धिगम्य नहीं होता है। संवृत्ति नाम आच्छादन क्रिया का है। एवम् संवृत्तिक वह होता है जो आच्छादक होता है। आच्छादक तत्व तो अविद्या है। उस अविद्या के द्वारा ही जब अन्य तत्व आच्छादित होता है, तब व्यावहारिक सत्य का उदय होता है। बौद्धों के द्वारा भी अविद्या स्वरूप माया के दो कार्य स्वीकृत हैं- (स्वभाव दर्शन का आवरण (उसमें असत्पदार्थ के स्वरूप का आरोपण है। शून्यवादियों के द्वारा संवृत्ति भी दो प्रकार की हैं - (तथ्यसंवृत्ति (और मिथ्यासंवृत्ति। पदार्थ के यथार्थ परिज्ञान में तथ्य संवृत्ति होती है किन्तु अयथार्थ ज्ञान में मिथ्या संवृत्ति होती है। दोनों संवृत्तियों के माध्यम से गृहीत ज्ञान सांवृत्तिक होता है। उसे ही व्यावहारिक सत्य भी कहते हैं।

सांवृत्तिक सत्य ही पारमार्थिक सत्य का साधन भी है। व्यावहारिक सत्य द्वारा ही पामार्थिक सत्य का बोध होता है। जन्म से कोई भी पारमार्थिक सत्य का दर्शन नहीं करता है। यहाँ पारमार्थिक सत्य निर्वाण रूप होता है। निर्वाण तो अज्ञात तत्व ही है। जिसकी प्राप्ति भी नूतन नहीं होती है। जिसका विनाश भी नहीं होता है, जो न तो नष्ट होता है और न उत्पन्न होता है। अतएव उसे अनिर्वचनीय कहते हैं। इस अनिर्वचनीय तत्व को जानना ही बौद्ध मत में तथागत, इस नाम से जाना जाता है। बौद्ध धर्म में व्यावहारिक-पारमार्थिक सत्य के आधार से ही व्यावहारिक आदेश दिया गया है। जब साधक पारमार्थिक सत्य

टिप्पणी

के अनुसन्धान से ही तथागत के स्वरूप और शून्यता की प्राप्ति होती है तब स्वयं वर्णनातीत होता है, क्योंकि वह तब अविद्या के अस्पष्ट होने पर सभी मतों से रहित हो जाता है। वह सभी प्रकार के क्लेशों से मुक्त होता है। किन्तु यह सभी निर्वाण रूप सम्यक् सम्बोधि के बिना असम्भव ही है। सम्यक् सम्बोधि तो षट् परमिताओं की प्राप्ति के अनन्तर ही प्राप्त होता है। षट् परमिता इस प्रकार से प्रतिपादित हैं- ज्ञान-शील-क्षान्ति-वीर्य-समाधि और प्रजा। इन छः परमिताओं में ज्ञान-शील-क्षान्ति के सतत् अभ्यास से पुण्यसंभार की प्राप्ति होती है। वीर्य-समाधि के अभ्यास से ज्ञान सम्भार की प्राप्ति होती है। दोनों प्रकार के सम्भार द्वारा प्रज्ञा का उदय होता है। प्रज्ञा भी दो प्रकार की है- साधक रूप और फल रूप। जब साधक साधनभूत प्रजा को प्राप्त करने के लिए अभिमुक्त चरित संज्ञक होता है तब उक्त ज्ञान के आविर्भाव होने पर फलरूप प्रज्ञा उत्पन्न होती है। प्रज्ञा का चरमोत्कर्ष ही बुद्धत्व की प्राप्ति होती है। इसी अवस्था में सर्वशून्यता का दर्शन उत्पन्न होता है। दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति भी यही सम्भव होती है। शून्यता की प्रतीति में सर्वविध धर्मों की स्वभावहीनता दिखती है। माध्यमिक कारिका में गति-इन्द्रिय-स्कन्ध-धातु-दुःख-संसर्ग-कर्म-बन्ध-मोक्ष-काल-आत्मा आदि तथ्यों का व्यावहारिक स्थिति में विश्लेषण किया गया है। उसमें शून्यवादियों के आचार्यों की तर्कपद्धति में सूक्ष्मता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। यह अखिल व्याख्यान निषेधात्मक ही है। इस पद्धति से जगत् की सभी अवधारणाएँ निःस्वभाव होती हैं। इस सम्प्रदाय की ही बुद्धपालिताओं के द्वारा शून्यता की सिद्धि के लिए तर्क की पूर्णता से तिरस्कार विहित है। अतएव बौद्ध दर्शन के इतिहास में माध्यमिक, यह प्रासांगिक नाम अभिहित है। वैदिक दर्शनों की मुक्ति अथवा मोक्ष के स्थान पर बौद्धों ने निर्वाण को प्रतिष्ठापित किया। बौद्ध दर्शन के विविध सम्प्रदायों के द्वारा निर्वाण का निरूपण स्व-स्व मान्यता के आधार पर किया गया। तथापित बौद्धों के चार सम्प्रदाय हीनयान-महायान के रूप में विभक्त हैं। क्योंकि हीनयान में निर्वाण का जो स्वरूप प्रतिष्ठापित है, महायान में वह भिन्न रूप में प्रतिपादित है। हीनयान में निर्वाण का स्वरूप है- हीनयान के मतानुसार संसार दुःखमय है। दुःख के तीन प्रकार हैं- दुःखदुःखता, संसार दुःखता एवं विपरिणदुःखता। शारीरिक और मानसिक कारणों द्वारा उत्पाद्यमान दुःख दुःखतासंज्ञक है। उत्पत्तिशील और विनाशशील जगत में वस्तुओं द्वारा उत्पाद्यमान दुःख संस्कारदुःखता कहे जाते हैं। जिन कारणों के द्वारा सुख भी दुःखरूप में परिणत होता है, उन कारणों द्वारा उत्पद्यमान दुःख विपरिणदुःखता होती है। प्राणी विविध दुःखों से कैसे मुक्त हो, यह विचार करने के लिए बुद्ध द्वारा चार आर्य सत्य का उपदेश किया गया। इन आर्य-सत्यों का आचार ही सांसारिक पदार्थों की नश्वरता और अनात्मता का ज्ञान दुःख निवृत्ति का सदुपाय है। एवम् अष्टाङ्गिकमार्ग का अनुसरण प्रथम उपाय है, सांसारिक पदार्थों के प्रति हेयभाव द्वितीय उपाय है, आत्मा के अस्तित्व की अस्वीकृति तृतीय उपाय है। इन तीनों उपायों के अनुपालन से त्रिविध दुःखों का उन्मूलन होता है। इस प्रकार की अवस्था में पुष्ट जीव की पुनः बन्धरूपता नहीं होती। यही निर्वाण की अवस्था है। महायान में निर्वाण का स्वरूप क्या है? महायान के मतानुसार निर्वाण के लिए दोनों प्रकार के

आवरणों का क्षय आवश्यक होता है। क्लेशावरण-ज्ञेयावरण की क्षति क्रमिक है। पहले क्लेशावरण नष्ट होता है, तदनन्तर ज्ञेयावरण का विनाश होता है। हीनयान में स्वीकृत निर्वाण का स्वरूप महायान की दृष्टिकोण से अपूर्ण है, क्योंकि क्लेशावरण के विनाश के बाद भी ज्ञेयावरण अवशिष्ट होता है। यद्यपि हीनयान मत द्वारा क्लेशावरण विनाश से आत्मा का निषेध विहित है। क्योंकि आत्मा के सुख आदि के लिए मानव की प्रवृत्ति होती है। अतएव दु:ख आदि होते हैं। आत्मदृष्टि से ही ये विषम परिणाम होते हैं। अत: आत्मा के निषेध होने पर दु:खों का स्वत: ही नाश हो जाएगा। यही हीनयान का नैरात्म्यवाद है। उसके दो भेद कहे गए हैं- पुद्गलनैरात्म्यवाद और धर्मनैरात्म्यवाद। एवम् पुद्गलनैरात्म्य द्वारा प्राणी स्वत: क्लेशमुक्त होता है। इसके विपरीत जगत के अभाव से सांसारिक पदार्थों की शून्यता के ज्ञान द्वारा पारमार्थिक-सत्य रूपी ज्ञान के ऊपर का आवरण नष्ट होता है।

साधक की सर्वज्ञता को प्राप्त करता है। क्लेश से मुक्ति का आवरण होता है, ज्ञेयावरण और ज्ञेयपदार्थ को आवृत करता है। दोनों आवरणों के विनाश से ही सर्वज्ञता को प्राप्त किया जा सकता है। महायान सम्प्रदाय में ज्ञेयावरण के निवारण के उपाय रूप में सर्वशून्यता का प्रतीति अभिमत है। इसी प्रकार हीनयान में अर्हत्प्राप्ति परम उद्देश्य है किन्तु महायान में बुद्धत्व प्राप्ति लक्ष्यभूत होता है। दोनों सम्प्रदायों का ही निर्वाण भेद है।

8.7.2 महायान

महायान मतानुसार निर्वाण के लिए दोनों प्रकार के आवरणों का क्षय आवश्यक होता है। क्लेशावरण और ज्ञेयावरण की क्षति क्रमिक है। पहले क्लेशावरण नष्ट होता है, तदनन्तर ज्ञेयावरण का विनाश होता है। हीनयान में स्वीकृत निर्वाण का स्वरूप महायान के दृष्टिकोण में अपूर्ण है, क्योंकि क्लेशावरण के विनाश के बाद भी ज्ञेयावरण अवशिष्ट होता है।

यद्यपि हीनयान मत द्वारा क्लेशावरण विनाश से आत्मा का निषेध विहित है। क्योंकि आत्मा से आत्मा का निषेध विहित है। क्योंकि आत्मा के सुख आदि के लिए मानव की प्रवृत्ति होती है। अतएव दु:ख आदि होते हैं। आत्मा दृष्टि से ही ये विषम परिणाम होते हैं। अत: आत्मा के निषेध होने पर दु:खों का स्वत: ही नाश हो जाएगा। यही हीनयान का नैरात्म्यवाद है। उसके दो भेद कहे गए हैं- पुद्गलनैरात्म्यवाद और धर्मनैरात्म्यवाद एवं पुद्गलनैरात्म्य द्वारा प्राणी स्वत: क्लेशमुक्त होता है। इसके विपरीत जगत के अभाव से सांसारिक पदार्थों की शून्यता के ज्ञान द्वारा पारमार्थिक-सत्य रूपी ज्ञान के ऊपर का आवरण नष्ट होता है। साधक भी सर्वज्ञता को प्राप्त करता है। क्लेश के द्वारा मुक्ति का आवरण होता है, ज्ञेयावरण और ज्ञेयपदार्थ आवृत करता है। दोनों आवरणों के विनाश से ही सर्वज्ञता को प्राप्त किया जा सकता है। महायान सम्प्रदाय में ज्ञेयावरण के निवारण के उपाय रूप से सर्वशून्यता की प्रतीति अभिमत है। इस प्रकार ही हीनयान में अर्हत्प्राप्ति परम उद्देश्य है, किन्तु महायान में बुद्धत्व प्राप्ति लक्ष्यभूत होता है। दोनों सम्प्रदायों का ही निर्वाणभेद है।

टिप्पणी

8.7.3 हीनयान

हीनयान मतानुसार संसार दु:खमय है। दु:ख के तीन प्रकार हैं- दु:खदु:खता, संस्कारदु:खता एवं विपरिणादु:खता। शारीरिक और मानसिक कारणों द्वारा उत्पाद्यमान दु:ख दु:खता संज्ञक है। उत्पत्तिशील और विनाशशील जगत् में वस्तुओं द्वारा उत्पाद्यमान दु:ख संस्कार दु:खता कही जाती है। जिन कारणों के द्वारा सुख भी दु:खरूप में परिणत होता है, उन कारणों द्वारा उत्पद्यमान दु:ख विपरिणदु:खता होती है। प्राणी विविध दु:खों से कैसे मुक्त हो, यह विचार करने के लिए बुद्ध द्वारा चार आर्य सत्य का उपदेश दिया गया। आर्य-सत्यों का आचार ही सांसारिक पदार्थों की नश्वरता और अनात्मकता का ज्ञान दु:खनिवृत्ति का सदुपाय है। एवम् अष्टांगिक मार्ग का अनुसरण प्रथम उपाय है, सांसारिक पदार्थों के प्रति हेयभाव द्वितीय उपाय है, आत्मा के अस्तित्व की अस्वीकृति तृतीय उपाय है। इन तीनों उपायों के अनुपालन से त्रिविध दु:खों का उन्मूलन होता है। इस प्रकार की अवस्था में पुष्ट जीव की पुन: बन्धरूपता नहीं होती। यही निर्वाण की अवस्था है।

8.8 बौद्ध तीर्थस्थान

सारनाथ बौद्ध केन्द्र वाराणसी से दस किलोमीटर दूर पर बौद्धों का प्राचीन केन्द्र है। गौतमबुद्ध ने अपना प्रथम उपदेश यहीं दिया था। बौधगया में ज्ञान-प्राप्ति के अनन्तर वाराणसी आ गए थे। अनन्तर यहाँ सारनाथ में स्थित हुए। शताब्दी के 640 समय में यहाँ 2500 पूजा करने वाले (पुजारी), अशोकस्तम्भ और 100 मीटर ऊँचे स्तूप थे। मुगलवंशियों के शासनकाल में अनेक स्मारक नष्ट हुए। भारतीय सर्वेक्षण विभाग में इसके अवशेष हैं। भारत के राष्ट्रीय चिन्ह पर विद्यमान चतुर्मुखी सिंह इससे ही उद्धृत है। इसमें अशोक निर्मित धमेकास्तूप और अर्धगोलाकर 93 पादोन्नत हैं। धर्मराणि स्तूप के समीप में अशोक ध्यानासक्त थे। मुख्य मन्दिर के सामने स्तम्भ निर्मित था। सारनाथ के आर्कियालाजिकल वस्तु संग्रहालय में मोर्यो कुषाणों और गुप्त काल की मूर्तियाँ हैं। गणेश, सरस्वती, विष्णु इत्यादि की मूर्तियाँ भी यहाँ हैं। आधुनिक काल में भी सारनाथ क्षेत्र दर्शनीय क्षेत्र है

बौद्ध स्थान-2

गया विहार का द्वितीय महानगर है। गया मण्डल का केन्द्र है। गया बिहार की राजधानी पटना से 100 किलोमीटर दूर पर स्थित है। फाल्गुन नदी के (रामायण में 'निरञ्जन' निर्दिष्ट है) तट पर विद्यमान हिन्दी-बौद्ध-जैन धर्मियों का पवित्र स्थान है। इस नगर के चारों ओर तिसृषुदिक्षु पर्वत हैं (मन्नलगौरी, शृन्नस्थान, राम्शिला, ब्रह्मयोनी) चार दिशाओं वाली (पूर्वा) नदी बहती है। प्राकृतिक परिसर, पुराने भवनों तथा निबिड़ मार्गों से युक्त है।

टिप्पणी

8.9 बुद्धजयन्ती

जन्मदिन का आचरण 'जयन्ती' शब्द से निर्दिष्ट है। यथा- 'गांधी जयन्ती' जो अक्टूबर मास की द्वितीय दिनांक पर आचरित है, और इस दिन गांधी महोदय का जन्म हुआ। बुद्ध जयन्ती तो विशिष्ट है। महात्मा बुद्ध के जीवन के तीन प्रमुख घटना उसी दिन में घटित हुई। प्रथम घटना उनका जन्म। ईसा.पू. छठी शताब्दी में वैशाख मास के पूर्णिमा के अवसर पर कपिलवस्तु राज्य में सिद्धार्थ रूप में उन्होंने जन्म प्राप्त किया। अपने जीवन के उन्नतीस (29) वर्ष पर्यन्त भी वह नहीं जानते थे कि सभी के जीवन में अस्वास्थ्य वेदना-कष्ट-मरण आदि सम्भव होते हैं। पुत्र द्वारा यह दु:ख आदि न ज्ञात हो वैसी व्यवस्था उसके पिता राजा शुद्धोदन ने कल्पित की। कभी रथ द्वारा नगर मार्ग में गए सिद्धार्थ ने लोगों के रोग, मरण आदि प्रत्यक्ष देखा। इसने उनके जीवन मार्ग को ही परिवर्तित कर दिया। जीवन के अर्थ के अन्वेषण में उनका मन प्रवृत्त हुआ। किसी रात्रि में वह राजमहल को त्यागकर चले गए। आठ वर्ष उन्होंने सर्वत्र भ्रमण किया। अन्त में बोधगया क्षेत्र में बोधिवृक्ष के नीचे बैठकर ध्यान करके उन्होंने ज्ञानबोध प्राप्त किया। और वह दिन वैशाख पूर्णिमा ही था। उस दिन से उन्होंने आत्मा की प्राप्ति के ज्ञान के प्रसार के लिए फिर से देश सञ्चारण आरम्भ किया। अस्सी (80) वर्ष में उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया। और वह दिन भी वैशाखपूर्णिमा ही था। अतएव 'वैशाख पूर्णिमा' 'बुद्ध पूर्णिमा' के रूप में प्रसिद्ध है। बौद्धमत के अनुयायी बुद्ध पूर्णिमा के दिन पर बोधगया में समाविष्ट होते हैं। प्रार्थना सभा, धार्मिक चर्चा, बुद्धोपदेश का जप, बौद्धग्रन्थों का पठन, सामूहिक ध्यान, शोभायात्रा इत्यादि अनेक कार्यक्रम वहाँ आयोजित होते हैं। यात्री उन दिनों में उत्तरप्रदेश में स्थित सारनाथ आदि पवित्र स्थानों पर महान प्रयास से जाते हैं।

पाठगत प्रश्न 8.2

1. आर्य चतुष्टय क्या है?
2. बौद्ध दर्शन में दो शाखाओं के नाम क्या है?
3. बौद्धदर्शन में मोक्ष क्या है?
4. बौद्ध धर्म में आर्यसत्य के मार्ग के कारण कितने हैं और वे क्या हैं?
5. बौद्धदर्शन में अष्टाङ्गिक मार्ग क्या हैं?
6. दो बौद्धतीर्थ स्थान लिखिए।

पाठान्त प्रश्न

1. गौतम बुद्ध का जीवन परिचय लिखिए।
2. अष्टाङ्गिक मार्ग का परिचय कराएं।
3. बौद्ध दर्शन के मोक्ष को प्रतिपादित कीजिए।
4. बौद्ध दर्शन के दार्शनिक को आधार लिखिए।
5. बौद्ध दर्शन के प्रमा और प्रमाण लिखिए।
6. बौद्ध दर्शन की आचार मीमांसा को लिखिए।

पाठसार-

बौद्ध दर्शन का भारतीय दर्शन साहित्य में क्या अवदान है, वह हमारे द्वारा इस पाठ में देखा गया। भगवान् गौतम बुद्ध का परिचय यहाँ हमारे द्वारा प्राप्त है। बौद्ध दर्शन के चार सम्प्रदाय है। सम्प्रदाय सिद्धान्तों का भी ज्ञान पाठ में है। और हीनयान-महायान शाखाओं का भी ज्ञान होता है। मोक्ष और उसका साधन भी ज्ञात है। बौद्धों के अष्टाङ्गिक मार्ग का परिचय हुआ। बौद्धधर्म के उद्भव और आधार भी हमारे द्वारा ज्ञात हुए। बौद्ध धर्म की प्रमा शुद्ध ज्ञान ही है। और बौद्ध कितने प्रमाण स्वीकार करते हैं वह भी यहाँ वर्णित है। इस प्रकार भारतवर्ष में बौद्ध धर्म का माहात्म्य ज्ञात हुआ।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

उत्तर-8.1

1. बौद्ध धर्म के प्रतिष्ठाता भगवान् गौतम बुद्ध।
2. बौद्ध दर्शन नास्तिक दर्शन है।
3. गौतम बुद्ध के पिता शुद्धोदन और माता मायादेवी थे।
4. कपिलवस्तु नामक नगर में जन्म हुआ।
5. बौद्ध दर्शन में चार सम्प्रदाय है।
6. चार कोटि का ज्ञान रहित शुद्ध ज्ञान है।
7. वैभाषिकों के मत में बाह्य पदार्थ सत् है।

टिप्पणी

8. सौत्रान्तिकों के मत में बाह्य पदार्थ असत् है।

9. सौत्रान्तिकों के मत में बाह्य पदार्थ अनुमेय है।

10. ई.पू. 226 में बुद्ध का जन्म हुआ।

उत्तर-8.2

11. बुद्ध मत द्वारा चार आर्य-सत्य इस प्रकार से निर्दिष्ट है- दु:ख, दु:खसमुदाय, दु:खनिरोध और दु:खनिरोध गामिनी उपाय।

12. हीनयान और महायान बौद्धदर्शन की दो शाखाएँ।

13. जीव का अज्ञान नाश ही मोक्ष है।

14. बुद्ध के मतानुसार आर्य-सत्य मार्ग के बारह कारण हैं- जरामरण, जाति, भव, उपादान, तृष्णा, वेदना, स्पर्श, षडायनत, नामरूप, विनय, संस्कार और अविद्या।

15. बौद्धदर्शन में अष्टाङ्गिक मार्ग होते हैं- सम्यक् वाक्, सम्यक् स्मृति, सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् समाधि, सम्यक् आजीव, सम्यक् कर्म।

16. गया और सारनाथ दो बौद्ध तीर्थ स्थान हैं।

॥अष्ट पाठ समाप्त॥